International Journal of Trend in Scientific Research and Development (IJTSRD)
Volume 6 Issue 4, May-June 2022 Available Online: www.ijtsrd.com e-ISSN: 2456 – 6470

हिंदी साहित्य का सामाजिक उत्थान पर प्रभाव

Dr. Sajita Nair

Associate Professor, (HOD), Department of Hindi,
BOS Member in UOR, Stani Memorial PG College, Jaipur, Rajasthan, India

ABSTRACT

"साहित्य में समाज की खोज का एक महत्वपूर्ण एक कड़ी है - साहित्यिक कल्पना के सामाजिक अभिप्राय की पहचान। साहित्य-रचना का समूचा व्यवहार कल्पना का व्यापार है। कल्पना की मदद से ही जीवन-जगत का बोध, यथार्थ की चेतना, चरित्रों का निर्माण, भावों-विचारों की व्यंजना के तरीकों की खोज सम्भव हो पाती है।

किसी का सत्य था,
मैंने संदर्भ में जोड़ दिया।
कोई मधुकोष काट लाया था,
मैंने निचोड़ लिया।
यो मैं कवि हूँ, आधुनिक हूँ, नया हूँ
काव्य-तत्त्व की खोज में कहाँ नहीं गया हूँ?
चाहता हूँ आप मुझे
एक-एक शब्द पर सराहते हुए पढ़ें।
पर प्रतिमा- अरे, वह तो
जैसी आप को रुचे आप स्वयं गढ़े।

उपर्युक्त पंक्तियाँ सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय की नया कवि, आत्म-स्वीकार से उद्धृत हैं। अज्ञेय ने रचना सृजन के दौरान की मनोस्थिति को बहुत ही सुंदर तरीके से यहाँ अभिव्यक्त किया है।

How to cite this paper: Dr. Sajita Nair "Impact of Hindi Literature on Social Upliftment" Published in International Journal of Trend in Scientific Research and Development (ijtsrd), ISSN: 2456-6470, Volume-6 | Issue-4, June 2022, pp.37-42, URL: www.ijtsrd.com/papers/ijtsrd49941.pdf

IJTSRD49941

Copyright © 2022 by author(s) and International Journal of Trend in Scientific Research and Development Journal. This is an Open Access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution License (CC BY 4.0) (http://creativecommons.org/licenses/by/4.0)

साहित्य का आविर्भाव भी इसी समाज से होता है जिसे रचनाकार अपने भावों के साथ मिलाकर उसे एक आकार देता है। यही रचना समाज के नवनिर्माण में पथप्रदर्शक की भूमिका निभाने लगती है। अज्ञेय मानते हैं कि साहित्यकार होने के नाते अपने समाज के साथ उनका एक विशेष प्रकार का संबंध है- समाज से उनका आशय चाहे हिंदी भाषी समाज रहा हो जो कि उनका पहला पाठक होगा, चाहे भारतीय समाज जिसके काफी समय से संचित अनुभव को वे वाणी दे रहे होंगे, चाहे मानव समाज हो जो कि शब्द मात्र में अभिव्यक्त होने वाले मूल्यों की अंतिम कसौटी ही नहीं बल्कि उनका स्रोत भी है ।

हम पाते हैं कि साहित्य वह सशक्त माध्यम है, जो समाज को व्यापक रूप से प्रभावित करता है। यह समाज में प्रबोधन की प्रक्रिया का सूत्रपात करता है। लोगों को प्रेरित करने का कार्य करता है और जहाँ एक ओर यह सत्य के सुखद परिणामों को रेखांकित करता है, वहीं असत्य का दुखद अंत कर सीख व शिक्षा प्रदान करता है। अच्छा साहित्य व्यक्ति और उसके चरित्र निर्माण में भी सहायक होता है। यही कारण है कि समाज के नवनिर्माण में साहित्य की केंद्रीय भूमिका होती है। इससे समाज को दिशा-बोध होता है और साथ ही उसका नवनिर्माण भी होता है। साहित्य समाज को संस्कारित करने के साथ-साथ जीवन मूल्यों की भी शिक्षा देता है एवं कालखंड की विसंगतियों, विद्रूपताओं एवं विरोधाभासों को रेखांकित कर समाज को संदेश प्रेषित करता है, जिससे समाज में सुधार आता है और सामाजिक विकास को गति मिलती है।

साहित्य में मूलत: तीन विशेषताएँ होती हैं जो इसके महत्त्व को रेखांकित करती हैं। उदाहरणस्वरूप साहित्य अतीत से प्रेरणा लेता है, वर्तमान को चित्रित करने का कार्य करता है और भविष्य का मार्गदर्शन करता है। साहित्य को समाज का दर्पण भी माना जाता है। हालाँकि जहाँ दर्पण मानवीय बाह्य विकृतियों और विशेषताओं का दर्शन कराता है वहीं साहित्य मानव की आंतरिक विकृतियों और खूबियों को चिह्नित करता है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि साहित्यकार समाज में व्याप्त विकृतियों के निवारण हेतु अपेक्षित परिवर्तनों को भी साहित्य में स्थान देता है। साहित्यकार से जिन वृहत्तर अथवा गंभीर उत्तरदायित्वों की अपेक्षा रहती है उनका संबंध केवल व्यवस्था के स्थायित्व और व्यवस्था परिवर्तन के नियोजन से ही नहीं है, बल्कि उन आधारभूत मूल्यों से है जिनसे इनका निर्णय होता है कि वे वांछित दिशाएँ कौन-सी है, और जहाँ इच्छित परिणामों और हितों की टकराहट दिखाई पड़ती है, वहाँ पर मूल्यों का पदानुक्रम कैसे निर्धारित होता है?

समाज के नवनिर्माण में साहित्य की भूमिका के परीक्षण से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि साहित्य का स्वरूप क्या है और उसके समाज दर्शन का लक्ष्य क्या है? हितेन सह इति सष्टिमूह तस्याभाव: साहित्यम्। यह वाक्य संस्कृत का एक प्रसिद्ध सूत्र-

वाक्य है जिसका अर्थ होता है साहित्य का मूल तत्त्व सबका हितसाधन है। मानव अपने मन में उठने वाले भावों को जब लेखनीबद्ध कर भाषा के माध्यम से प्रकट करने लगता है तो वह रचनात्मकता ज्ञानवर्धक अभिव्यक्ति के रूप में साहित्य कहलाता है। साहित्य का समाजदर्शन शूल-कंटों जैसी परंपराओं और व्यवस्था के शोषण रूप का समर्थन करने वाले धार्मिक नैतिक मूल्यों के बहिष्कार से भरा पड़ा है। जीवन और साहित्य की प्रेरणाएँ समान होती हैं। समाज और साहित्य में अन्योन्याश्रित संबंध होता है। साहित्य की पारदर्शिता समाज के नवनिर्माण में सहायक होती है जो खामियों को उजागर करने के साथ उनका समाधान भी प्रस्तुत करती है। समाज के यथार्थवादी चित्रण, समाज सुधार का चित्रण और समाज के प्रसंगों की जीवंत अभिव्यक्ति द्वारा साहित्य समाज के नवनिर्माण का कार्य करता है।

साहित्य समाज की उन्नति और विकास की आधारशिला रखता है। इस संदर्भ में अमीर खुसरो से लेकर तुलसी, कबीर, जायसी, रहीम, प्रेमचंद, भारतेन्दु, निराला, नागार्जुन तक की श्रृंखला के रचनाकारों ने समाज के नवनिर्माण में अभूतपूर्व योगदान दिया है। व्यक्तिगत हानि उठाकर भी उन्होंने शासकीय मान्यताओं के खिलाफ जाकर समाज के निर्माण हेतु कदम उठाए। कभी-कभी लेखक समाज के शोषित वर्ग के इतना करीब होता है कि उसके कष्टों को वह स्वयं भी अनुभव करने लगता है। तुलसी, कबीर, रैदास आदि ने अपने व्यक्तिगत अनुभवों का समाजीकरण किया था जिसने आगे चलकर अविकसित वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में समाज में स्थान पाया। मुंशी प्रेमचंद के एक कथन को यहाँ उद्धृत करना उचित होगा, ''जो दलित है, पीड़ित है, संत्रस्त है, उसकी साहित्य के माध्यम से हिमायत करना साहित्यकार का नैतिक दायित्व है।''

प्रेमचंद का किसान-मज़दूर चित्रण उस पीड़ा व संवेदना का प्रतिनिधित्व करता है जिनसे होकर आज भी अविकसित एवं शोषित वर्ग गुज़र रहा है। साहित्य में समाज की विविधता, जीवन-दृष्टि और लोककलाओं का संरक्षण होता है। साहित्य समाज को स्वस्थ कलात्मक ज्ञानवर्धक मनोरंजन प्रदान करता है जिससे सामाजिक संस्कारों का परिष्कार होता है। रचनाएँ समाज की धार्मिक भावना, भक्ति, समाजसेवा के माध्यम से मूल्यों के संदर्भ में मनुष्य हित की सर्वोच्चता का अनुसंधान करती हैं। यही दृष्टिकोण साहित्य को मनुष्य जीवन के लिये उपयोगी सिद्ध करते हैं।

परिचय

साहित्य की सार्थकता इसी में है कि वह कितनी सूक्ष्मता और मानवीय संवेदना के साथ सामाजिक अवयवों को उद्घाटित करता है। साहित्य संस्कृति का संरक्षक और भविष्य का पथ-प्रदर्शक है। संस्कृति द्वारा संकलित होकर ही साहित्य 'लोकमंगल' की भावना से समन्वित होता है। सुमित्रानंदन पंत की पंक्तियाँ इस संदर्भ में कहती है कि-

वही प्रज्ञा का सत्य स्वरूप
हृदय में प्रणय अपार
लोचनों में लावण्य अनूप
लोक सेवा में शिव अविकार।

उन्नीसवीं एवं बीसवीं शताब्दी को भारतीय साहित्य के सांस्कृतिक एवं समाज निर्माण की शताब्दी कहा जा सकता है। इस शताब्दी ने स्वतंत्रता के साथ-साथ समाज सुधार को भी संघर्ष का विषय बनाया। इस काल के साहित्य ने समाज जागरण के लिये कभी अपनी पुरातन संस्कृति को निष्ठा के साथ स्मरण किया है, तो कभी तात्कालिक स्थितियों पर गहराई के साथ चिंता भी अभिव्यक्त की। आठवें दशक के बाद से आज तक के काल का साहित्य जिसे वर्तमान साहित्य कहना अधिक उचित होगा, फिर से अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़कर समाज निर्माण की भूमिका को वरीयता के साथ पूरा करने में जुटा है। वर्तमान[1,2]

1884 पुस्तक, इंद्रजालकाला (जादू की कला) में सूर्य का चित्रण;ज्वाला प्रकाश प्रेस, मेरठ

साहित्य मानव को श्रेष्ठ बनाने का संकल्प लेकर चला है। व्यापक मानवीय एवं राष्ट्रीय हित इसमें निहित हैं। हाल के दिनों में संचार साधनों के प्रसार और सोशल मीडिया के माध्यम से साहित्यिक अभिवृत्तियाँ समाज के नवनिर्माण में अपना योगदान अधिक सशक्तता से दे रही हैं। हालाँकि बाजारवादी प्रवृत्तियों के कारण साहित्यिक मूल्यों में गिरावट आई है परंतु अभी भी स्थिति नियंत्रण में है।

आज आवश्यकता है कि सभी वर्ग यह समझें कि साहित्य समाज के मूल्यों का निर्धारक है और उसके मूल तत्त्वों को संरक्षित करना जरूरी है क्योंकि साहित्य जीवन के सत्य को प्रकट करने वाले विचारों और भावों की सुंदर अभिव्यक्ति है।

किसी भी राष्ट्र या समाज के सांस्कृतिक स्तर का अनुमान उसके साहित्य के स्तर से लगाया जा सकता हैं. साहित्य न केवल समाज का दर्पण होता हैं. बल्कि वह दीपक भी होता हैं. जो समाज का उसकी बुराइयों की ओर ध्यान दिलाता हैं. तथा एक आदर्श समाज का रूप प्रस्तुत करता हैं. विद्वानों ने किसी देश को बिना साहित्य के मृतक के समान माना हैं.

अंधकार हैं वहाँ जहाँ आदित्य नही हैं
मुर्दा हैं वह देश जहाँ साहित्य नही हैं |

यह माना जाता हैं कि किसी देश की सभ्यता तथा संस्कृति के इतिहास को पढ़ने के लिए उसके साहित्य को ही पढना पर्याप्त होता है |इसीलिए साहित्य किसी देश ,समाज तथा उसकी सभ्यता या संस्कृति का दर्पण होता हैं. भारतीय साहित्य की महान परम्पराओं के कारण ही इस देश का गौरव विश्व के मानचित्र पर अक्षुण्ण बना रहा हैं.

जिसमे साहित्यकारों ने अपनी लेखनी से विश्व समाज का सदैव मार्गदर्शन किया हैं. कालिदास, पाणिनी याज्ञवल्क्य, तुलसी, कबीर सूर मीरा आदि ने प्राचीन तथा मध्यकालीन कवियों द्वारा फैलाए गये प्रकाश से भारतीय समाज सदैव आलोकित होता रहा हैं.[3,4]

साहित्य ही वह क्षेत्र हैं जो मनुष्य को परमार्थ, समाज सेवा, करुणा, मानवीयता, सदाचरण तथा विश्व बन्धुत्व जैसे उद्दात मानवीय मूल्यों का अनुसरण करना सिखाता हैं. संस्कारवान व्यक्ति वही हैं जो ह्रदय से उदार हो, निष्कपट व्यवहार करने वाला हो तथा अपने लिए किसी प्रकार के लोभ लालच की अपेक्षा ना करता हो. साहित्य सदैव ऐसे ही महान मानवीय मूल्यों की रचना करता है जो प्राणिमात्र के सुखद जीवन की कल्पना करते हों |

तुलसी ने अपनी प्रसिद्ध रचना रामचरितमानस में ऐसी अनेक सूक्ति परक चौपाइयों की रचना की है जो व्यक्ति तथा समाज को सीधे -सीधे निर्देश करती हैं ,जैसे -का वर्षा जब कृषि सुखाने कर्म प्रधान विश्व करि राखा आदि |

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, मुंशी प्रेमचन्द ,निराला ,मुक्तिबोध जैसे अनेक साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से भारतीय समाज में सदाचार के संस्कार,श्रम साधना के संस्कार, राष्ट्रभक्ति के संस्कार, निस्वार्थ समाज सेवा के संस्कार, आचरण की सभ्यता के संस्कार तथा विश्व मानवता के संस्कार, सामाजिक समरसता के संस्कार आदि की स्थापना की हैं.[5,6]

अत: कहा जा सकता हैं कि साहित्य ही वह उपकरण हैं जो व्यक्ति, समाज तथा राष्ट्र को संस्कारवान बनाता हैं.

विचार-विमर्श

साहित्य किसी भी समाज का आईना होता है । साहित्य के आलोक से समाज में चेतना का संचरण होता है । समाज के निर्माण में योगदान देता है और समाज के द्वारा ही पुनः साहित्य का निर्माण होता है । अत : कहा जा सकता है कि साहित्य और समाज एक - दूसरे के पूरक है । प्रश्न उठता है कि साहित्य क्या है तो आचार्य जगन्नाथ ने सच ही कहा है कि, ' रमणीयार्थ : प्रतिपादक, शब्द, काव्यम् ' अर्थात् रमणीय अर्थ के प्रतिपादक कहते हैं । रमणीय शब्द एवं अर्थों के साहित्य को साहित्य कहते हैं । रमणीय अर्थात् सत्यम्, शिवम् और सुदरम् का समन्वययुक्त भाव है । " हितेन यह साहितेन् तस्य भावं साहित्य " अर्थात् साहित्य वह है, जिसमें हित की भावना हो, जिसमें समष्टि का हित हो । मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और जन्म से लेकर मृत्यु तक मनुष्य समाज से जुड़ा रहता है । आप इसका विस्तृत रूप हमारे सामने है ।

तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियाँ साहित्य को प्रतिबिंबित करती हैं । यदि हम किसी भी समाज या जाति के उत्थान पतन, आचार, व्यवहार, सभ्यता, संस्कृति इत्यादि को देखना चाहते हैं, तो हमें उस समाज के साहित्य का अध्ययन करना होगा । उत्कृष्ट साहित्य का निर्माण संसार में उस समाज विशेष की एक विशिष्ट पहचान निरूपित करता है । साहित्य मनुष्य को गतिशीलता प्रदान करता है यदि समाज अपने अनुसार साहित्य का निर्माण करता है तो साहित्य समाज को अपनी विचारधारा से बदलने का प्रयास करता है । अंधविश्वासों, कुरीतियों, रूढ़ियों एवं पिछड़ी मानसिकता के अंधकार से दूर एक नई रोशनी दिखाता है । दोनों का आपस में घनिष्ठ संबंध है । मनुष्य की उज्जवलतम् चेतना का वरदान है साहित्य । यह शक्ति का स्रोत है यह स्वान्तः सुखाय नही अपितु लोक हिताय भावनाओं से युक्त होता है और तभी रामायण, महाभारत जैसे ग्रंथ इसे एक आदर्श प्रदान करते हैं तो वहीं संसो, मार्क्स के साहित्य ने समाज को एक दिशा प्रदान की है । तुलसी, सूर, रसखान ने जहाँ भक्ति की धारा बहाई है वहीं बंकिम चंद्र चटर्जी व रविन्द्रनाथ टैगोर ने मातृभूमि पर मर - मिटने का संदेश दिया वहीं प्रेमचंद जैसे महान साहित्यकारों ने समाज को यथार्थवादी दृष्टिकोण प्रदान कर लोक संस्कृति की समस्या व महत्व को हमारे सामने रखने का प्रयास किया । मानवीय मूल्यों का संचार समाज में साहित्य के माध्यम से ही हो सकता है ।[7,8]

परिणाम

बढ़ती पाश्चात्य संस्कृति की चकाचौंध ने हमारे जीवन मूल्यों को प्रभावित किया है । ऐसे दौर में उत्कृष्ट साहित्य रचना ही समाज के उत्थान का मार्ग प्रशस्त कर सकती है । आवश्यक है कि हम साहित्य को नित नये आयाम दें जिसमें हमारी प्राचीन पहचान संसार में अक्षुण रहें और हम अपने पुराने वैभव को प्राप्त कर सकें । लेखन क्या महज खुद को खुश करने के लिए है या उसका सामाज के प्रति भी कोई दायित्व है? इस विषय पर हमीरपुर के हमीर भवन में एक साहित्यिक संगोष्ठी का आयोजन किया गया। यह संगोष्ठी इरावती पत्रिका और राष्ट्रीय कवि संगम के बैनर में हुई और देश और समाज की नब्ज को पहचानने और सोशल ट्रांसफारमेशन का सबब बनी। संगोष्ठी में इस बात पर चर्चा रही कि साहित्यिक लेखन समाज से जुड़े। 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' के मूल मंत्र पर ही साहित्य रचना केंद्रित होनी चाहिए। संगोष्ठी में प्रियंवदा ने 'कविता के सामाजिक सरोकार' विषय पर आलेख प्रस्तुत किया, जिस पर आमंत्रित लेखकों व कवियों ने विचारोत्तेजक टिप्पणियां प्रस्तुत कीं। प्रियंवदा का कहना था कि समाज के उत्थान व परिवर्तन के लिए साहित्य का प्रगतिशील होना जरूरी है।

उन्होंने कहा कि कविता में प्रेम को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता क्योंकि प्रेम एक ऐसा सार्वभौमिक मूल्य है जिसके इर्द-गिर्द अधिकांश साहित्य रचा गया है। लेकिन प्रेम को विषय बना कर रची जा रही कविताओं का स्तर गिर रहा है। प्रेम एक ऐसी अनुभूति है जिसे शब्दों में नहीं बांधा जा सकता लेकिन काव्य रचनाओं में प्रेम की सूक्ष्म संवेदनाओं को रेखांकित किया जाना चाहिए, न कि उसके उथले रूप को जैसा कि आज हम सोशल मीडिया में देख रहे हैं। उन्होंने कहा कि हमारे देश में एक ऐसा दौर भी था जब मुक्तिबोध और धूमिल समाज के सरोकारों से जुड़कर काव्य रचना कर रहे थे। उनकी परंपरा को समकालीन कविता में आगे बढ़ाने की जरूरत है। मुक्तिबोध के अनुसार 'अब अभिव्यक्ति के सारे खतरे उठाने ही होंगे, तोड़ने ही होंगे मठ और गढ़ सब'। प्रियंवदा का संकेत उन सांप्रदायिक व कट्टरवादी ताकतों की ओर भी था जो देश में सद्भाव के ढांचे को तहस-नहस करने पर तुली हुई हैं। कट्टरवाद के विरुद्ध लेखकों को अपनी कलम उठानी चाहिए। आलेख पर प्रस्तुत अधिकांश टिप्पणियों का निष्कर्ष यह था कि साहित्य का समाज के प्रति ईमानदार व जवाबदेह होना जरूरी है क्योंकि आज मनुष्य जिस भयावह दौर से गुजर रहा है, उसे देखते हुए हाशिए पर सिमटे व्यक्ति की पीड़ा मुखर होनी चाहिए। जो साहित्य अंतिम पंक्ति में

खड़े व्यक्ति के प्रति पक्षधर नहीं है उसे पाठक को नकार देना चाहिए। संगोष्ठी के आरंभ में दिवंगत सुप्रसिद्ध कवि केदारनाथ सिंह को श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए दो मिनट का मौन रखा गया और हिंदी कविता में उनके बहुमूल्य योगदान का स्मरण किया गया। जाने-माने बुद्धिजीवी डा. भगतवत्सल शर्मा ने अपने अध्यक्षीय संबोधन में कहा कि साहित्य अपने आसपास की घटनाओं के प्रभाव से मुक्त होकर नहीं रचा जा सकता। अतः उसे समाज से जुड़ना होगा। साहित्य का मर्म इस बात में निहित है कि वह व्यष्टि से समष्टि की यात्रा तय करे। तुलसी, कबीर, नानक, सूरदास, रसखान आदि कवि आज भी जन-जन में इसलिए लोकप्रिय हैं कि उन्होंने समाज में फैले अंधकार के विरुद्ध आवाज उठाई। अंधविश्वासों, रूढ़ियों व सामंती सोच पर प्रहार किया। वास्तव में वे सब प्रगतिशील सोच के कवि थे और उनमें समाज को बदलने की चिंता थी।[9,10]

भारतीय परंपरा में भावना को जो स्थान प्राप्त है, यूनानी परंपरा में वही विचार का है।दोनों परंपराओं में बुद्धि को अपना स्थान प्राप्त है। भावना और बुद्धि का योग विवेक के रूप मेंविकसित हो जाता है तथा विचार और बुद्धि का योग तर्क के रूप में। विवेक की दृष्टिउचित-अनुचित पर रहती है, तर्क उसको बहस का विषय बना देता है। इसकी परिणति के रूपमें भारतीय परंपरा जहाँ आचरण को महत्व देती आई है, वहाँ यूनानी परंपरा सत्ता को। वैदिकयुग से आज तक भारतीय परंपरा में जिस प्रकार से आचरण का महत्व अक्षुण्ण रहा है, उसीप्रकार से यूनानी, यूरोपीय, आधुनिक परंपराओं में सत्ता का स्थान सर्वोपरि रहा है। वैदिकपरंपरा में जहाँ कवि को मनीषी कहकर उसे सर्वोच्च स्थान दिया गया है, वहीं प्लेटो ने यूनानीआदर्श राज्य के कवि को भ्रम फैलाने वाला कहकर बाहर कर दिया । इस मूल भेद के कारणही जहाँ भारत में संस्कृति का विकास हुआ, वहाँ यूनान, यूरोप, अमेरिका आदि में सभ्यताका।बीसवीं सदी के उत्तरार्ध से पश्चिमी दृष्टिकोण में कुछ परिवर्तन आने का संकेत मिलनेलगा है। अमेरिका में डैनियल बेल ने बुद्धि की तीव्रता के स्थान पर भावना की तीव्रता कोमहत्व देकर सनसनी पैदा कर दी है। अपने प्रयोगों और आंकड़ों से उन्होंने प्रमाणित किया हैकि जीवन में बुद्धि से अधिक भावना की तीव्रता का महत्व है, क्योंकि जटिल से जटिलपरिस्थिति को भांप ने में भावना की तीव्रता ही कारगर होती है, बुद्धि की तीव्रता नहीं।उन्नीसवीं सदी के अंत में ही दार्शनिक जॉन डिवे ने भावना और शिक्षा के महत्व की ओरध्यान आकृष्ट किया था, पर तब उनकी अनसुनी कर दी गई थी।अब स्थिति यह है किसभ्यताओं की टकराहट (क्लैश ऑफ सिविलाइजेशन्स) लिखकर ख्याति अर्जित करने वाले सैम्युएल हंटिंग्टन जैसे लोग भी यह मानने को विवश हुए हैं कि मानव के विकास में संस्कृतिकी भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। ('कल्चर मैटर्स' नामक उनके द्वारा संपादित पुस्तक)उन्नीसवीं-बीसवीं सदी के मानदंड से भौतिक विकास में संस्कृति की भूमिका को निर्णायकमानना एक क्रांतिकारी बात है। जापान सहित दक्षिण - पूर्वी एशिया के देशों के विकास की तेजगति का कारण उनकी संस्कृति की विशिष्टता को ही माना जा रहा है। इन क्षेत्रों की संस्कृति केविकास में स्थानीयता के साथ-साथ भारतीय एवं चीनी परंपरा के तत्वों का भी महत्वपूर्णयोगदान रहा है। भारतीय संस्कृति की भव्यता, अखंडता और दीर्घ जीवन का कारण जीवन मेंभावना, साहित्य और दर्शन को यथोचित स्थान प्रदान करना है। भारतीय साहित्य शास्त्र में रसको ब्रह्मास्वाद सहोदर इसलिए कहा गया है कि जिस प्रकार से आध्यात्मिक साधना मेंसत्वोदेक का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है, उसी प्रकार से साहित्य में भी रस निष्पत्ति सत्वोदेकके बिना संभव नहीं है। गीता के गुणत्रय विभाग योग नामक चौदहवें अध्याय में मानव जीवन मेंगुण विकास के विषय पर प्रकाश डाला गया है। स्वतंत्रता आंदोलन के युग में भारत कीतामसिक चेतना, सुप्त चेतना, निष्क्रिय चेतना को जगा उसे रजोगुण और सत्व गुण से सम्पन्नकर भावना संस्कार के इसी मार्ग को अपनाया गया था।भावना के संस्कार से ही मनुष्य हैवानसे इंसान बनता है। हर दोपाया यदि इंसान होता तो संसार में इतनी अशांति क्यों होती? यूनानीदार्शनिक अरस्तू ने कहा था कि मनुष्य विचारशील प्राणी है। यदि वह विचारशील होता तोबार-बार युद्ध क्यों होते? वह छल-कपट क्यों करता? मनुष्य वस्तुत भावना के वशीभूत होकरही सुकर्म और दुष्कर्म करता है। जिसकी भावना संस्कृत नहीं होती वह बार बार दुष्कर्म करताहै। अत: भावना के संस्कार का मानव जीवन में, समाज के विकास की दिशा को निर्धारितकरने में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है।भावना के विकास और संस्कार में सबसे महत्वपूर्ण स्थानसाहित्य का है। फिर संगीत, नृत्य, चित्र आदि अन्य कलाओं का। अल्पकाल के लिए संगीत,नृत्य आदि मनुष्य को भाव विभोर कर सकते हैं, परंतु साहित्य की तरह से व्यक्ति और समाजदोनों पर स्थायी प्रभाव नहीं डाल सकते हैं। भारतीय परंपरा का एक उदाहरण देखिए। श्रीरामके राज्य में सीता को लेकर प्रवाद पैदा हुआ। राम के बाण में रावण को मारने की शक्ति थी,प्रवाद को समाप्त कर ने की नहीं। जो काम राम के बाण ने नहीं किया, वह वाल्मीकि की वाणीने किया। लव-कुश के मुंह से रामायण का गायन सुनकर यज्ञ मंडप में एकत्र जन समूह ने नकेवल सीता को सर्वथा निर्दोष मान लिया, बल्कि जनमत के कारण राम को सीता के साथलव-कुश को भी सीता पुत्र के रूप में अपना उत्तराधिकारी स्वीकार करना पड़ा।साहित्य मनुष्यके भाव लोक को अत्यंत सहज रूप से बदल देता है। भाव परिवर्तन के बिना वाणी कापरिवर्तन केवल ऊपरी होता है। उसके बिना मनुष्य का आचार-व्यवहार नहीं बदलता। बाहरीपरिवर्तन स्थायी नहीं होता, वह दिखावा या छलावा मात्र होता है। इन दिनों ऐसे छलावे का हीजोर है, इसीलिए घोषणाएं तो होती हैं, परंतु सचमुच में परिणाम कहीं दिखाई नहीं पड़ता।दिखाई देते हैं असफलता, निराशा, असंतोष, विद्रोह, हिंसा। मानव भावनाओं के संस्कार कीओर ध्यान नहीं दिए जाने के कारण यह विसंगति आ गई है।आज मनुष्य के भौतिक विकास पर अपार धनराशि खर्च की जा रही है, पर उसके भावनात्मक विकास पर कोई ध्यान नहींदिया जा रहा है। ऐसी परिस्थिति में मनुष्य भावना की दृष्टि से या तो बालक रह जाता है याहैवान बन जाता है। आज चारों ओर उत्तेजना का वातावरण है। संपूर्ण जीवन उत्तेजनामयबनाने के लिए सारे साधन जुटाए जा रहे हैं। इसका परिणाम यह हो रहा है कि किशोर युवा होजाता है, युवा प्रौढ़ और प्रौढ़ वृद्ध। सारे संसार में मनुष्य की आयु में जो वृद्धि हुई है, वहअधिकांश के लिए इसलिए त्रासद होती जा रही है कि उनके जीवन में शारीरिक या मानसिकदृष्टि से उत्तेजना देनेवाली कोई चीज रही ही नहीं। जो रोग के आरंभ में ही तेज से तेज दवा कासेवन कर लेते हैं, उन पर फिर किसी दवा का असर होता ही नहीं। साहित्य के अभाव में आजमानव समाज की अवस्था लगभग ऐसी ही होती जा रही है।[11,12]

निष्कर्ष

उन्होंने कहा कि कविता तभी सामाज से जुड़ सकती है जब वह भोगे हुए यथार्थ को प्रस्तुत करे। सामाजिक सरोकारों से जुड़ी कविता के लिए आवश्यक है कि वह अनुभूति, प्रतीति और अभिव्यक्ति के स्तर पर पाठक की संवेदना को छू सके। इरावती के संपादक राजेंद्र राजन ने कहा कि अगर कविता दबे-कुचले, शोषित और उत्पीड़ित समाज का प्रतिनिधित्व न कर पाए तो उसे सामाजिक सरोकारों से नहीं जोड़ा जा सकता। उनके अनुसार सोशल मीडिया पर जिस प्रकार दोयम दर्जे की कविताओं का महिमामंडन हो रहा है, उसे देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि समकालीन कविता संकट में है और अपने सरोकारों से भटक चुकी है। राष्ट्रीय कवि संगम की हमीरपुर इकाई के अध्यक्ष संदीप शर्मा ने कहा कि संगोष्ठी में स्कूलों व कालेजों में पढ़ रहे छात्रों की लेखन प्रतिभा को अभिव्यक्ति देने के लिए यहां मंच प्रदान किया गया है क्योंकि नवोदित लेखकों में सृजन की अपार संभावनाएं हैं और नवांकुरों को खिलने का मौका मिलना चाहिए। गोष्ठी में कवि सम्मेलन का आयोजन भी किया गया, जिसमें हिमाचल व अन्य राज्यों से आए करीब 50 कवियों ने अपनी रचनाओं का पाठ किया।

साहित्य किसी घटना, वस्तु या भावलोक या विचारलोक को उसकी सम्पूर्णता और समग्रता मेंदेखने की दृष्टि प्रदान करता है। जिस साहित्य को मात्र मनोरंजन के लिए पढ़ा जाता है, उसमेंभी भावोदेक की वह शक्ति होती है, भले ही उसका स्तर निम्न होता है। बाल साहित्य के नामपर किशोरों के लिए कॉमिक्स के रूप में उपलब्ध साहित्य कौतूहल तत्व के कारण हीलोकप्रिय हो रहा है। पर इसी के अनुरूप अब प्रौढ़ों में साहित्य की लोकप्रियता में विश्वव्यापीस्तर पर भारी कमी आई है, जिसके परिणामस्वरूप प्रौढ़ों का उनके बौद्धिक विकास केअनुरूप भावनात्मक विकास नहीं हो पा रहा है। भावनात्मक दृष्टि से ऐसे अविकसित लोगयंत्रवत् अपना काम तो करते हैं, परंतु समग्रता में देखने की शक्ति विकसित न होने के कारणएक ओर आपराधिक घटनाओं में वृद्धि होती जाती है और दूसरी ओर राष्ट्र का विकास रुकजाता है, क्योंकि नेतृत्व का संकट चुनौती के सामने अपर्याप्त साबित होता है या बड़ी-बड़ीकंपनियों का दिवालियापन उजागर होने लगता है।संपूर्णता और समग्रता की दृष्टि सत्य केसाक्षात्कार का मार्ग प्रशस्त करती है। सत्य की यह पूर्णता मनुष्य को व्याकुल और व्यग्र करदेती है। अर्जुन जैसा धुरंधर भी योगेश्वर के विश्व रूप को देखकर भयभीत हो गया और उनकेमनुष्य रूप को देखने की प्रार्थना करने लगा। लेकिन इससे अर्जुन को भावनात्मक प्रौढ़ता और सम्यक् दृष्टि प्राप्त हुई, महाभारत युद्ध में विजय उसी के कारण प्राप्त हुई, क्योंकि तभी अर्जुनका मोह नष्ट हुआ और कर्तव्य में प्रवृत्त होने की स्मृति प्राप्त हुई। (गीता, 18.73)आज मनुष्यअर्जुन से भी अधिक मोहग्रस्त है और वह इसीलिए अपने दायित्व से मुंह मोड़ रहा है। साहित्यसे ही उसका यह मोह, यह संकीर्णता दूर हो सकती है। उसके अध्ययन में अभी साहित्य कीकहीं कोई प्राथमिकता है ही नहीं। वह अपने व्यवसाय से संबंधित सूचनाओं को एकत्र करने मेंव्यस्त है। पर सूचना से भाव संस्कार नहीं होता, उससे दृष्टि प्राप्त नहीं होती। दृष्टि के अभावमें रास्ता टटोल कर चलने से वह कब कहाँ ठोकर खाएगा? कब कहाँ खाई-खन्दक में गिरेगा,इसका क्या ठिकाना?साहित्य के पठन-पाठन की समुचित व्यवस्था के अभाव में भाषा केसम्यक् प्रयोग का स्तर गिरता जाता है, अभिव्यक्ति शिथिल होती जाती है, कहना चाहता हैकुछ पर कह जाता है कुछ और। इतने घातक हथियारों से संपन्न मनुष्य यदि भाषा का ठीकप्रयोग नहीं कर सकता, तो असावधानी के कारण कभी भी भयंकर दुर्घटना घट सकतीहै।अपूर्ण सत्य के बोध का मनुष्य के मन पर अधूरा प्रभाव पड़ता है, पूर्ण सत्य के दर्शन औरबोध का पूरा प्रभाव। फ्रांस की राज्य क्रांति के पहले रुसो, वाल्टेयर, दिदरॉत आदि ने चर्च औरराजा दोनों के अन्याय और जनता की दुर्दशा का जो चित्र अंकित किया, उसी से प्रेरितभावनात्मक उफान के कारण वहाँ क्रांति हुई, लोकतंत्र का बिगुल बजा, जिसका प्रभाव अंतत:सारे संसार पर पड़ा। भारत में जब आधुनिक भारतीय भाषाओं का उदय और विकास हुआ,तो भक्ति आंदोलन युग के साहित्य ने सारे भारत को नई सामाजिक भावनात्मक एकता प्रदानकी। भक्ति काव्य हिंदी में लिखा गया हो या किसी और भाषा में, सबका स्वर एक ही था- ' हरिको भजै सो हरि को होई' और तब 'जात-पात पूछो नहिं कोई।' इसी प्रकार से स्वतंत्रता आंदोलन के युग में सारे भारत में एक ही स्वर गूंजा- 'मुझे तोड़ लेना वनमाली, उस पथ में देनातुम फेंक, मातृभूमि पर शीश चढ़ाने, जिस पथ जावें वीर अनेक।' एक भारतीय आत्मा के पुष्पकी अभिलाषा ने भारतीयों की अभिलाषा का रूप ले लिया। तभी अंग्रेजी राज का सूरज डूबगया और भारतीय स्वतंत्रता के सूरज का उदय हुआ।आज अपसंस्कृति की बात इसलिए उठरही है कि भारत की भावनात्मक एकता को विश्व ग्राम के अनुरूप रूप देने के लिए जिसदृष्टि की आवश्यकता है वह उपेक्षित है। भारतीय भाषाओं में रचे जा रहे साहित्य को शासकवर्ग और उच्च वर्ग का पाठक पढ़ता नहीं और अंग्रेजी में रचा जा रहा अधिकांश साहित्य विदेशीपाठकों को ध्यान में रखकर तैयार किया हुआ 'माल' है। राज दरबार में कभी संस्कृत चलतीथी, कभी फारसी और अब अंग्रेजी चलती है। ऐसी स्थिति में भारत या भारतीय लोकतंत्र कातेज कैसे प्रकट हो सकता है? दूसरी तरफ अंग्रेजी भाषा में लिखित साहित्य के पाठकों कीस्थिति यह है कि पटना, लखनऊ आदि कई नगरों में ब्रिटिश काउंसिल के पुस्तकालय बंदकिए जा रहे हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि एक तरफ साक्षरता बढ़ रही है और दूसरी तरफउसी गति से शिक्षा का अभाव होता जा रहा है। दिनोंदिन देश के अधिकांश पुस्तकालयों कीस्थिति दयनीय होती जा रही है, पर होटलों और क्लबों की संख्या बढ़ती जा रही है। साहित्य केअभाव में संस्कृति प्राणवान नहीं रह सकती और संस्कृति के अभाव में राष्ट्रीय परंपरा। तो क्याअब भारत भी यूनान, मिस्र, रोम आदि की तरह एक भौगोलिक इकाई मात्र रह जाएगा?[13,14]

संदर्भ

[1] आचार्य रामचन्द्र, शुक्ल (2013). हिंदी साहित्य का इतिहास. इलाहाबाद: लोकभारती प्रकाशन. पृ° 54.

[2] हिंदी सेवी सम्मान योजना, 2011

[3] साहित्य के बारे में, 2002

[4] साहित्यिक निबन्ध (गूगल पुस्तक ; लेखक - गणपतिचन्द्र गुप्त), 2001

[5] साहित्य सिद्धान्त (गूगल पुस्तक), 2010

[6] साहित्यानुशीलन (गूगल पुस्तक ; लेखक - डॉ दयाशंकर शुक्ल), 2012

[7] साहित्य क्या है? (साहित्यालोचन, हिन्दी चिट्ठा), 2011

[8] साहित्य क्या है? - आचार्य संजीव वर्मा 'सलिल', 2015

[9] समकालीन हिंदी साहित्य की जाल-पत्रिका 'अभिव्यक्ति', 2016

[10] साहित्य, संस्कृति और भाषा अंतराष्ट्रीय मंच सृजनगाथा, 2016

[11] हिन्दी काव्य, 2011

[12] हिन्दी साहित्य प्रश्नोत्तरी (गूगल पुस्तक ; लेखिका - विभा देवसरे), 2011

[13] भारतीय साहित्य का जाल-पुस्तकालय एवं लेखकों और कवियों के बारे में जानकारी के लिए संपूर्ण स्रोत 'पुस्तक', 2001

[14] साहित्य में मूल्यबोध - डॉ॰ हरेकृष्ण मेहेर, 2004

International Journal of Trend in Scientific Research and Development
IJTSRD
International Journal of Trend in Scientific Research and Development
ISSN: 2456-6470